HIND 3003.6 – Hindi Folk Literature

Department of Languages, Cultural Studies & Performing Arts

University of Sri Jayewardenepura

"लोक" शब्द की अवधारणा

"लोक" शब्द संस्कृत के 'लोक' धातु से 'धञ' प्रत्यय लगाकर बना है। इस धातु का अर्थ "देखना" होता है, जिसका लट् लकार (वर्तमान काल) अन्य पुरुष, एकवचन का रूप "लोक" है। अतः "लोक" शब्द का अर्थ हुआ "देखने वाला"। इस प्रकार वह समस्त जन समुदाय, जो इस कार्य को करता है, "लोक" कहलाएगा। "लोक" शब्द अत्यंत प्राचीन है। "साधारण जनता" के अर्थ में इसका प्रयोग ऋगवेद में अनेक स्थानों पर किया गया है। ऋगवेद में "लोक" के लिए "जन" शब्द का प्रयोग भी उपलब्ध होता है। ऋगवेद में सुप्रसिद्ध पुरुष सूक्त में "लोक" शब्द का व्यवहार, "जीव और स्थान" दोनों अर्थों में किया गया है। पाणिनि ने वेद से पृथक लोक की सत्ता को स्वीकार किया है। उन्होंने अनेक शब्द की निष्पत्ति बताते हुए लिखा है कि वेदों में इसका रूप अमुक प्रकार का है। परंतु "लोक" में इसका स्वरूप भिन्न प्रकार का समझना चाहिए। भागवदगीता में "लोक" और "लोक संग्रह" आदि अनेक शब्दों का प्रयोग अनेक स्थानों पर किया गया है।

"लोक संग्रह" का अर्थ

"लोक संग्रह" का अर्थ "साधारण जनता का आचरण, व्यवहार तथा आदर्श" है।

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने "लोक" के संबंध में अपने विचार प्रकट करते हुए लिखा है कि *"लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं है, बल्कि नगरों और गाँवों में फ़ैली हुई वह समूची जनता है, जिनके व्यवहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं हैं। ये लोग नगर*

में परिष्कृत रुचि संपन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और सुकुमारिता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएँ आवश्यक होती हैं, उनको उत्पन्न करते हैं।"

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार "लोक" शब्द की परिभाषा, *"आधुनिक सभ्यता से दूर, अपने प्राकृतिक परिवेश में निवास करने वाली तथा कथित, अशिक्षित एवं असंस्कृत जनता को लोक कहते हैं, जिनका आचार-विचार एवं जीवन, परंपरा युक्त नियमों से नियंत्रित होता है।"*

इससे स्पष्ट रूप से ज्ञान होता है कि जो लोग संस्कृति तथा परिष्कृत लोगों के प्रभाव से बाहर रहते हुए अपनी पुरातन स्थिति में वर्तमान हैं, उन्हें "लोक" की संज्ञा प्राप्त है। उन्हीं लोगों के साहित्य को "लोक साहित्य" कहा जाता है। यह साहित्य प्रायः मौखिक होता है तथा परंपरागत रूप से चला आता है।

शिष्ट संस्कृति और लोक संस्कृति

वैदिक काल से ही भारत देश में संस्कृति की दो पृथक-पृथक धाराएँ प्रवाहित हो रही हैं।

I. शिष्ट संस्कृति

II. लोक संस्कृति

I. शिष्ट संस्कृति

"शिष्ट संस्कृति" से हमारा तात्पर्य उस अभिजात्य वर्ग की संस्कृति से है, जो कि बौद्धिक विकास के उच्चतम शिखर पर पहुँची हुई थी, जो अपनी प्रतिभा के कारण समाज का अग्रणी और पथ-प्रदर्शक था तथा जिसकी संस्कृति का स्रोत वेद या शास्त्र था।

II. लोक संस्कृति

"लोक संस्कृति" से हमारा तात्पर्य जन साधारण की उस संस्कृति से है, जो अपनी प्रेरणा लोग से प्राप्त करती है, जिसकी उत्स-भूमि जनता था और बौद्धिक विकास के निम्न धरातल पर उपस्थित थी। लोक संस्कृति, शिष्ट संस्कृति को सहायक होती है।